सल्तनतकालीन धार्मिक दशा

सम्पूर्ण सल्तनत युग में इस्लाम धर्म राज्य धर्म था। इस कारण प्रत्येक सुल्तान का एक मुख्य कर्त्तव्य दारुल-हर्ब (काफिरों का देश) को दारुल-इस्लाम (इस्लाम का देश) में परिवर्तित करना रहा। अपने राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के साथ-साथ प्रत्येक सुल्तान ने अपने इस धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति करने का भी प्रयत्न किया। एक सुल्तान किस मात्रा में इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयत्न कर सका, यह उसकी सैनिक-क्षमता और परिस्थितियों पर निर्भर करता था और एक सुल्तान किस सीमा तक इस उद्देश्य की पूर्ति करने में लगनशील रहा, यह उसके व्यक्तिगत धार्मिक विचारों की कट्टरता पर निर्भर था। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक सुल्तान ने अपनी-अपनी क्षमता और विचारों की सीमा के अनुसार इस कार्य की पूर्ति हेतु प्रयत्न किये। अलाउद्दीन खलजी और मुहम्मद बिन तुगलक जैसे शासकों के लिये राजनीतिक उद्देश्य प्रधान था, जबकि फीरोज तुगलक और सिकन्दर लोदी जैसे शासकों ने राज्य की शक्ति को इस्लाम धर्म की श्रेष्ठता को स्थापित करने का साधन बनाने में कोई संकोच नहीं किया।

सभी सल्तनत सुल्तानों के समय में मुसलमानों और बहुसंख्यक हिन्दुओं में अन्तर किया जाता था। हिन्दू किसानों को मुसलमान किसानों (यद्यपि उनकी संख्या नगण्य थी) की तुलना में अधिक लगान देना पड़ता था तथा हिन्दू व्यापारियों को मुसलमान व्यापारियों की तुलना में दुगुना कर देना पड़ता था। हिन्दू तो क्या, हिन्दू धर्म से परिवर्तित मुसलमानों को भी राज्य में अच्छे पद नहीं दिये जाते थे। हिन्दुओं को मुसलमान बन जाने हेतु विभिन्न प्रलोभन दिये जाते थे। न्याय में मुसलमानों के साथ पक्षपात होता था। हिन्दुओं को उनके तीर्थ स्थानों पर जाने से रोका जाता था और उन्हें जजिया नामक कर भी देना पड़ता था। सुल्तानों की दान व्यवस्था और अस्पतालों के निर्माण से हिन्दुओं को कोई लाभ नहीं था। जबकि इस्लामिक मदरसों, मकतबों और मौलवियों को धन व जागीरें दी जाती थी हिन्दू पाठशालाओं और विद्यालयों को नष्ट किया जाता था। हिन्दू-मन्दिरों और देवी-देवताओं की मूर्तियों को नष्ट करना और उन्हें अपमानित करने के लिये उनके खण्डों को मस्जिदों की सीढ़ियों पर लगाना और मन्दिरों के स्थान पर मस्जिदों का निर्माण करना प्रायः सभी सुल्तानों के समय में हुआ। निस्सन्देह हिन्दुओं को शब्द और व्यवहार दोनों ही प्रकार से 'जिम्मी' तथा 'काफिर' समझा जाता था।

अधिकांश दिल्ली-सुल्तान सुन्नी थे। इस कारण शियाओं और अन्य मुसलमान धर्मावलम्बियों के प्रति भी उनका व्यवहार कटुतापूर्ण था।

आधुनिक समय में विभिन्न इतिहासकारों

Ajanta PRODUCTS Oxford

धर्म के प्रति धर्मपरायणता था कुछ थी। इस प्रकार, सभी प्रकार से लाभदायक इस कार्य की पूर्ति करने वाले सुल्तानों के कार्य की निन्दा नहीं की जा सकती तथा उनके कार्य के उद्देश्य को कोई अन्य रूप प्रदान करना उनके साथ अन्याय करना होगा। इस कारण दिल्ली-सुल्तानों की नीति धार्मिक असहिष्णुता की थी और इसमें कोई अनुचित अथवा आश्चर्य की बात नहीं थी। परन्तु एक बात अवश्य कही जा सकती है कि दिल्ली-सुल्तानों में से कोई भी सुल्तान महान न हो सका और न उनके अनुकूल कार्य कर सका। अन्यथा अलाउद्दीन जैसे योग्य शासक और महान योद्धा को भी आधुनिक इतिहासकार महान मानने में संकोच क्यों करते हैं? दिल्ली-सुल्तानों में से कोई भी सुल्तान यह न समझ सका कि समस्त हिन्दू प्रजा को मुसलमान बनाना असम्भव है और न ही हिन्दू धर्म को शक्ति के आधार पर ही नष्ट किया जा सकता है। यदि वे यह समझ सके होते तो वे धार्मिक-कट्टरता के अवसाद से बच जाते और हिन्दू-मुसलमानों में वह पारस्परिक सद्भावना अधिक तीव्र गति से स्थापित होती जो जनता में स्वाभाविक दृष्टि से उत्पन्न हो रही थी। मुगल शासक इस बात को समझ सके और अकबर इसे समझकर महान कहलाने का अधिकारी बन सका। इसी कारण मुगल वंश भारत में अधिक स्थिर, अधिक लाभप्रद और अधिक उन्नतशील बन सका। दिल्ली-सुल्तानों की धार्मिक कट्टरता उनकी एक बड़ी भूल थी।

दिल्ली-सुल्तानों का शासन पूर्णतया दोषरहित नहीं था तथापि वह समय की आवश्यकता की पूर्ति करने में समर्थ रहा। उसके मूल दोष उनकी धार्मिक कट्टरता की नीति और अपने सैनिक-संगठन को समय के अनुकूल न बनाना था। एक ने उनको बहुसंख्यक हिन्दू-प्रजा के सहयोग से वंचित रखा और दूसरे ने उनके हाथों से भारत की सत्ता छीन ली।

ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि सुल्तानों की नीति धार्मिक संकीर्णता और पक्षपात पर आधारित नहीं थी। अपने इस मत के समर्थन में वे विभिन्न तर्क भी देते हैं; जैसे - मन्दिरों को नष्ट किये जाने का कारण धन था, मूर्तियों को नष्ट करने का उद्देश्य हिन्दुओं को एक ईश्वर में विश्वास करना सिखाना था। तत्कालीन इतिहासकारों ने केवल प्रतिष्ठा और प्रचार के कारण सुल्तानों के धार्मिक कार्यों को बढ़ा-चढ़ा कर लिखा था, आदि। सम्भवतः ऐसे विद्वानों का इस मत को प्रकट करने का उद्देश्य सद्भावनापूर्ण था। आधुनिक युग की परिस्थितियों में जबकि धार्मिक सहनशीलता, हिन्दू - मुसलमानों के अच्छे सम्बन्ध और धर्म - निरपेक्ष राज्य के निर्माण की आवश्यकता है, तब धार्मिक कट्टरता पर चाहे वह आधुनिक युग की हो अथवा मध्य-युग की, बल देने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु इतिहास तथ्यों पर आधारित सत्य है, न कि किसी युग की विशेष प्रवृत्ति के प्रचार के साधन। इसके अतिरिक्त, सत्य के द्वारा ही भविष्य का निर्माण करना तर्कसंगत है और उसी के आधार पर किसी भी परिस्थिति या प्रवृत्ति का इस आधार बनाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में यह कहना अधिक उपयुक्त है कि तथ्य यह प्रमाणित करते हैं कि प्रायः सभी दिल्ली - सुल्तानों की धार्मिक नीति संकीर्णता और साम्प्रदायिकता पर आधारित थी। तत्कालीन सभी इतिहासकारों ने इस्लाम धर्म की रक्षा और प्रचार के हेतु सुल्तानों द्वारा किये गये कार्यों की प्रशंसा की थी और वे सभी इतिहासकार मुसलमान थे। भविष्य से अनभिज्ञ जो भी उन्होंने लिखा उसमें अतिशयोक्ति हो सकती है परन्तु उनके कथन का आधार सत्य है। मध्य-युग में धर्म की मान्यता थी और यदि सुल्तानों ने इस मान्यता के अनुकूल कार्य किये तो उन पर न तो सन्देह करने की आवश्यकता है, न आश्चर्य करने की और न उन सुल्तानों पर लांछन लगाने की। उन सुल्तानों ने अपने युग की प्रवृत्ति के अनुसार कार्य किया, जो स्वाभाविक था। इसके अतिरिक्त उनके पक्ष में यह भी कहा जा सकता है कि केवल धर्म प्रचार ही उनका लक्ष्य नहीं था। भारत में उन्होंने अपना राज्य स्थापित किया था। उस राज्य की रक्षा करना उनका प्रमुख हित और स्वार्थ था। इस कारण धर्म से राजनीति अनिवार्य रूप से जुड़ी हुई थी। इस कारण सम्पूर्ण सल्तनत काल एक संघर्ष का युग था। जिसमें हिन्दू और मुसलमान धर्म और राजनीति दोनों ही स्थलों में एक - दूसरे के शत्रु थे। उस संघर्ष में मुसलमान विजेता और आक्रमणकारी बन चुके थे तथा हिन्दू पराजित और रक्षात्मक। इन परिस्थितियों में विजेता का अपने धर्म की श्रेष्ठता को स्थापित रखने का प्रयत्न और बहुसंख्यक हिन्दुओं को मुसलमान धर्म में परिवर्तित करके अपनी संख्या को बहुमत में बदलने का प्रयत्न परिस्थितियों के अनुकूल, राजनीति के लिये लाभप्रद और